अकबर के राजत्वकाल में उलेमाओं की स्थिति

डॉ. शकुन्तला सिंह*

आदर्श इस्लामी शासक के लिए शरीअत का ज्ञान आवश्यक है। ऐसे विद्वान जो शरीअत के पूर्ण जानकर हैं उन्हें 'उलमा' कहा जाता है। इसी के द्वारा शासक राज्य के नियमों को जानकर उनके आदर्शों पर शासन चलाता है। कभी-कभी कठिन समस्याओं पर इस्लामी कानून जानने के लिए सम्राट सभी प्रमुख उलेमाओं को बुलवाते थे। इस तरह एकत्रित उल्माओं को 'सुदूर' कहा जाता था। जो इसका सभापतित्व करता एवं स्थायी रूप से परामर्श के लिए नियुक्त होता था उसे 'सद्र-अस-सुदूर' कहा जाता था।[१]

अकबर के राजत्वकाल में सात सद्र-अस-सुदूर हुए। इनमें प्रथम बाईस वर्षों में चार सद्र नियुक्त हुए। सर्वप्रथम बैराम खाँ ने अपने संरक्षण कालमें शेख गदाई को फरवरी, १५५६ में 'सद्र-उस-सुदूर' के पद पर नियुक्त किया। वह शिया मतावलंबी, विद्वान तथा प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति था। बैराम खाँ शासन सम्बन्धी किसी भी कार्यवाही के पूर्व उसकी सलाह लेता था। शेख गदाई को मुस्लिम उलेमाओं, विद्वानों एवं फकीरों को जागीर और वजीफा देने के पूरे अधिकार प्राप्त थे। इसके पश्चात् अब्दुल बाकी तथा ख्वाजा मुहम्मद साहिल सद्र नियुक्त हुए। १५६५ में मुजफर खाँ की संस्तुति पर अब्दुन्नबीसद्र नियुक्त हुआ। उसे धार्मिक कार्यों के लिए अनुदान, वजीफे, जागीर आदि प्रदान करने का अधिकार प्राप्त थे।[२] वह धर्मांध सुन्नी था। अकबर की उदारवादी नीति का पालन करना उसके लिए सम्भव नहीं था। उसने गैर सुन्नी मुसलमानों तथा अन्य धर्मावलंबियों पर अत्याचार किए। सम्राट ने उसे इस पद से १५७९ में हटा दिया।[३] अकबर ने सद्र के कार्यों की जाँच करायी। जनवरी १५७९ को उसने सुल्तान ख्वाजा को सद्र नियुक्त किया एवं उसे तूरखाँ की उपाधि दी। ख्वाजा दीन इलाही का सदस्य था।[४] अकबर की मृत्यु के समय मीरान सद्रजहाँ सद्र था। सद्र-उस-सुदूर की नियुक्ति सम्राट की इच्छा पर उसके द्वारा होती थी। इसके कार्यकाल की कोई निश्चित अवधि नहीं थी। सद्र के कार्य से असंतुष्ट होकर सम्राट इन्हें हटा देता था। साधारणतया सद्र को उनके वेतन के एवज में भूमि दी जाती थी। अकबर के काल के अन्तिम सद्र सद्रजहां को २,००० का मनसब प्राप्त था। सद्र का कार्यालय दीवान तथा बख्शी के कार्यालय से बहुत छोटा था।[५]

***प्रवक्ता, इतिहास जगतपुर पी.जी. कॉलेज, जगतपुर**

अकबर ने घोषणा की कि उन विवादग्रस्त मामलों में जो धर्म या राजनीति से सम्बन्धित हैं, निर्णय देने का अंतिम अधिकार सम्राट का है। लेकिन उसने माना कि ऐसे विषयों पर सम्राट् का निर्णय कुरान, शरीअत एवं जनहित के विरूद्ध नहीं होना चाहिए। इस घोषणा को 'मजहर' कहते हैं। इस सिद्धान्त से उलेमा की शक्ति कम हो गई।[६] उसके राजत्व के विचारों में समन्वय एवं सद्भावना की ध्वनि थी और ये हदीस शरीयत, कुरान व धर्मशास्त्र के विरोध में नहीं वरन् उनके समर्थक थे। यह उलेमा के विशेषाधिकारों को समाप्त करने का भी एक अच्छा प्रयास था। इसका ध्येय उन अत्याचारों को समाप्त करना था जो धर्म के नाम पर किए जाते थे। यह इस्लाम के विरूद्ध न होकर सच्चे धर्म का पोषक था।[७]

मुगल सम्राट् अकबर उलेमा के राजनीतिक मामलों में अनुचित हस्तक्षेप को सहन न कर सका। वह एक अत्यन्त उदार, एवं परोपकारी शासक था जो साम्राज्य के सभी लोगों, मुसलमानों एवं गैर मुसलमानों की भलाई के लिए कार्य करना चाहता था। अतः वह इस नीति की पालना करने में न तो उलेमा की सलाह लेना चाहता था और न ही उन्हें इस नीति का विरोध करने की अनुमति देना चाहता था। वह धार्मिक मामलों में भी उलेमा को पूर्ण अधिकार दिये जाने के पक्ष में नहीं था। वह उलेमा के प्रभाव से मुक्त रहा और जब भी आवश्यकता पड़ी उसने अपना निर्णय मानने के लिए उन्हें बाध्य किया। इसी प्रकार धार्मिक विवादों को भी सम्राट अपने विवेक के अनुसार तय कराता।[८]

प्रारम्भ से ही अकबर धार्मिक कट्टरता और उलेमा के संकीर्ण विचारों का विरोधी था। उलेमा की रूढ़िवादिता को समाप्त करने में अकबर को उसके दरबारियों से सहायता मिली। शेख मुबारक की कट्टर पंथी उलेमा द्वारा अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उसने ऐसे उलेमा से बदला लेने के उद्देश्य से कार्य किया और उसके लड़के अबुल फजल और फैजी ने सावधानी से कट्टर उलेमा के विरूद्ध एक दल तैयार किया। यहाँ तक कि बदायुनी ने जो अकबर की धार्मिक नीति का कटु आलोचक था कट्टर पन्थी उलेमा का विरोध किया। इस प्रकार अबुल फजल गैर मुस्लिम और गैर सुन्नी दरबारियों का सहयोग प्राप्त करने में सफल हुआ और अपने दल के प्रभाव से उसने अकबर को कट्टर पंथी उलेमा का विरोधी कर दिया। ऐसी परिस्थितियों में कुछ समकालीन विद्वानों ने अकबर ने स्वयं विरोध किया है।

१५७५ ई.[९] सम्राट ने फतेहपुर-सीकरी के इबादतखाना नामक भवन में शेख अब्दुन्नावी तथा मुल्ला अब्दुल्ला सुल्तानपुरी (मख्दमू-उल-मूल्क) नामक उस समय के प्रमुख उलेमा तथा इस्लाम के कुछ अन्य नेताओं को बुलाया। धार्मिक वाद-विवाद के दौरान उनके आपसी झगड़े एवं मतभेद इतने बढ़ गए की सम्राट को उनके व्यवहार से बहुत निराशा हुई।

तत्पश्चात् उसने अन्य धर्मों के नेताओं से वाद-विवाद किया। परिणामस्वरूप सम्राट का उलेमा की सर्वोच्च धार्मिक शक्ति पर से विश्वास उठ गया। अकबर का विचार था कि वह उलेमा से अधिक इस्लाम के सिद्धांतों को समझता था।

धार्मिक परम्पराओं को मानने के साथ हमें 'अकल' से भी काम लेना चाहिए। अकबर की यह समझ कट्टर और संकुचित विचारधारा के विरुद्ध थी। अकबर औपचारिक और परम्परावादी धर्म से अलग हटकर बात करता था। धर्मों में घुसी बुराइयों की निन्दा करता था। इनकी वजह से अकबर पर तरह-तरह के इल्ज़ाम लगे। कट्टर मुल्लाओं या उलेमाओं ने उसे इस्लाम धर्म का शत्रु समझा।

अकबर के समय में शेख गदाई, अब्दुलवाकी, ख्वाजा मुहम्मद सालेह हरोबी और शेख अब्दुन्नबी प्रसिद्ध सद्र-उस्-सुदूर थे। अकबर ने अपने शासनकाल में १५७९ ई. में सुल्तान ख्वाजा की नियुक्ति की और इस पद के अधिकारों में कमी की। अनुदान की भूमि की व्यवस्था के लिए ईमानदार अधिकारियों को नियुक्त कर दिया। इसके साथ ही उसने बहुत से भ्रष्टाचारी काजियों को पदच्युत कर दिया। उलेमा को अब अनुदान बहुत विचार करके दिया जाने लगा। इसके फलस्वरूप जो धर्माध्यक्ष इस्लामी सिद्धान्त के अनुसार शरः के संरक्षक थे, अब विभागीय अधिकारी मात्र रह गये। सारा विभाग सम्राट् की देखरेख में आ गया और पुरानी अव्यवस्था दूर कर दी गई।[१०]

प्रान्तीय शासन में 'सद्र' होता था। वह उलेमा का सदस्य होता था। सम्राट् उसकी नियुक्ति सद्र-उस्-सुदूर की सिफारिश पर करता था। वह प्रमुख सद्र के अधीन रहता था। मुसलमानों को जितने धार्मिक और शैक्षणिक अनुदान, भूमि दान या वजीफे (सयूरगल) आदि दिये जाते थे उनका वितरण प्रान्तीय सद्र करता था। उससे यह उपेक्षा की जाती थी कि वह उदार स्वभाव वाला, धार्मिक एवं नीति शास्त्र का विद्वान होगा।[११] अकबर ने सद्रों के अधिकार में बहुत कमी कर दी थी।

सन्दर्भ -

१. कुरैशी, दि ऐडमिनिस्ट्रेशन ऑफ दि मुगल एंपायर, पृ. १५७.

२. बदायूँनी, मुंतखबुत्तवारीख, हेग, भाग ३, पृ. ८०.

३. श्रीवास्तव, आशीर्वादीलाल, अकबर दि ग्रेट, भाग २, पृ. ७८-८०.

४. रायचौधरी, माखनलाल, दि स्टेट ऐंड रिलिजन इन मुगल इण्डिया, पृ. २९२.

५. इब्नहसन, दि सेन्ट्रल स्ट्रक्चर ऑफ दि मुगल एंपायर, पृ. २६५.

६. देखिये, तबकाते अकबरी, भाग २, पृ. ३४५-४०६; मासिरे रहीमी, भाग १,पृ. ८६६-८६७;अबुल फ़ज़ल, अनु. बेवरिज, अकबरनामा, खण्ड १, पृ. १७९, १८३; आईने अकबरी, भाग ३, पृ. ४३५, ४४३; श्रीवास्तव, आशीर्वादीलाल, (१९६२-६७), अकबर द ग्रेट, भाग २, पृ. १५-१८.

७. हसन, इब्न (१९३६), द सेण्ट्रल स्ट्रक्चर ऑव द मुगल एम्पायर, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, पृ. ६१; त्रिपाठी पृ. १३८; डे, यू.एन. (१९६९), द मुगल गवर्नमेण्ट, पृ. १४-१५.

८. टाइटस, एम. टी., दि रिलिजस क्वेस्ट आफ इस्लाम, आक्सफोर्ड, १९३० पृ. ७०.

९. प्रसाद, के., भारत का इतिहास, पटना, १९९६, पृ. ९९.

१०. अबुल फ़ज़ल, अनु. बेवरिज, अकबरनामा, २, पृ. २०-२१, ८७, ११४; आईने अकबरी, भाग १, पृ. २६३.

११. श्रीवास्तव, अकबर महान्. २, पृ. १३२-३३.

******